

Presentation

Ravi Prakash

Civil Judge (S.D.),

Ramnagar, District Nainital.

Training Period 05.02.2024 to 09.02.2024

**Subject : List pendency vis a vis
order 21 Rule 102**

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 21 नियम 97 से लेकर 106 में स्थावर सम्पत्ति के कब्जे के सम्बन्ध में पारित की गयी डिक्री में डिक्रीदार या क्रेता को कब्जा प्रदत्त किये जाने में प्रतिरोध या बाधा उत्पन्न किये जाने पर अनुतोष से सम्बन्धित प्रावधान किया गया है।

आदेश 21 नियम 97 यह उपबन्धित करता है कि यदि कब्जा अभिप्राप्त करने में किसी व्यक्ति द्वारा प्रतिरोध या बाधा उत्पन्न किया जाता है तो ऐसे प्रतिरोध या बाधा का परिवाद करते हुए आवेदन किया जा सकेगा।

आदेश 21 नियम 98 यह उपबन्धित करता है कि आवेदन किये जाने पर न्याय निर्णयन करते हुए आवेदन को मंजूर या नामंजूर किया जा सकता है या ऐसा अन्य आदेश पारित किया जा सकता है जो न्यायालय उचित समझे।

आदेश 21 नियम 99 यह उपबन्धित करता है कि जहां निर्णीतऋणी से भिन्न कोई व्यक्ति डिक्री के निष्पादन में बेकब्जा कर दिया जाता है तो वह शिकायती प्रार्थना पत्र बेकब्जा किये जाने के बारे में प्रस्तुत कर सकता है।

आदेश 21 नियम 100 यह उपबन्धित करता है कि आवेदन किये जाने पर न्याय निर्णयन करते हुए आवेदन को मंजूर या नामंजूर किया जा सकता है या ऐसा अन्य आदेश पारित किया जा सकता है जो न्यायालय उचित समझे।

आदेश 21 नियम 101 यह उपबन्धित करता है कि नियम 97 या नियम 99 के अधीन आवेदन पर कार्यवाही के पक्षकारों या उनके प्रतिनिधियों के बीच पैदा होने वाले आवेदन के न्याय निर्णयन से सुसंगत सभी प्रश्न (जिनके अन्तर्गत सम्पत्ति में अधिकार, हक या हित सम्बन्धित प्रश्न भी हैं) अवधारित किये जायेंगे, जिसके लिए पृथक वाद की आवश्यकता नहीं होगी।

आदेश 21 नियम 102 नियम 99 में दी गयी व्यवस्था का अपवाद प्रस्तुत करता है, जो इस प्रकार है कि :-

102— वादकालीन अंतरिती को इन नियमों का लागू न होना— नियम 98 और नियम 100 में की कोई भी बात स्थावर सम्पत्ति के कब्जे की डिक्री के निष्पादन में उस व्यक्ति द्वारा किए गए प्रतिरोध या डाली गई बाधा को या किसी व्यक्ति के बेकब्जा किये जाने को लागू नहीं होगी जिसे निर्णीतऋणी ने वह सम्पत्ति उस वाद के जिसमें डिक्री पारित की गई थी, संस्थित किये जाने के पश्चात् अन्तरित की है।

स्पष्टीकरण—इस नियम में, “अन्तरण” के अन्तर्गत विधि के प्रवर्तन द्वारा अन्तरण भी है।

103— आदेशों की डिक्री माना जाना

आदेश 21 नियम 102 सिविल प्रक्रिया संहिता में प्रतिपादित विधिक सिद्धान्त को माननीय उच्चतम न्यायालय के एक विधिक निर्णय के माध्यम से बेहतर तरीके से समझा जा सकता है।

Usha Sinha v. Dina Ram. (2008) 7 SCC 144

माननीय उच्चतम न्यायालय के खण्डपीठ द्वारा निर्णीत इस मामले में विधिक तथ्य इस प्रकार थे कि—

माननीय उच्चतम न्यायालय के खण्डपीठ द्वारा निर्णीत इस मामले में विधिक तथ्य इस प्रकार थे कि—

* प्रत्यर्थी द्वारा स्थावर सम्पत्ति के स्वत्व (Title) का वाद संख्या 140 सन् 1999 प्रस्तुत किया गया था। वाद लम्बित रहने के दौरान प्रतिवादी संख्या 04 व 05 ने अपने हिस्से की सम्पत्ति का विक्रय दिनांक 15.02.2000 एवं 24.05.2021 को कर दिया। यह वाद प्रतिवादीगण के विरुद्ध एक पक्षीय रूप से निर्णीत करते हुए वादी के पक्ष में निस्तारित किया गया तथा वादी को कब्जा हस्तान्तरित करने का आदेश दिया गया।

* अपीलार्थी द्वारा वाद संख्या 226/2001 प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध स्वामित्व के सम्बन्ध में प्रस्तुत किया गया जिसमें कहा गया कि अपीलार्थी ने यह सम्पत्ति क्रय किये जाने के आधार पर पूर्ण स्वामी हो गया है, इसलिए वाद संख्या 140/1999 में पारित डिक्री को शून्य घोषित कर दिया जाये।

* प्रत्यर्थी द्वारा निष्पादन वाद संख्या 10/2002 प्रस्तुत करते हुए वाद संख्या 140/1999 में पारित एक पक्षीय डिक्री को निष्पादित किये जाने का प्रार्थना किया गया था। इस निष्पादन वाद में एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया कि चूंकि अपीलार्थी ने यह सम्पत्ति रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के माध्यम से क्रय कर लिया है तथा एक पक्षीय निर्णय को अपास्त किये जाने के लिए वाद दायर किया है इसलिए निष्पादन कार्यवाही पर रोक लगा दिया जाये। निष्पादन न्यायालय द्वारा अपने आदेश दिनांकित 20.11.2003 में इस प्रार्थना पत्र के आधार पर निष्पादन कार्यवाही स्थगित कर दिया।

* माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा निष्पादन न्यायालय की कार्यवाही स्थगित किये जाने के आदेश को अपास्त कर दिया। जिस कारण भारतीय संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष अनुमति याचिका के माध्यम से यह मामला माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष लाया गया था।

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस मामले में प्रतिपादित विधिक सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में पैरा 17, 26 व 29 महत्वपूर्ण हैं, जो इस प्रकार हैं कि—

Para 17. Bare reading of the Rule 102 of Order 21 CPC makes it clear that it is based on justice, equity and good conscience. A transferee from a judgment-debtor is presumed to be aware of the proceedings before a court of law. He should be careful before he purchase the property which is the subject-matter of litigation. It recognises the doctrine of lis pendens recognised by Section 52 TPA. Rule 102 of Order 21 CPC thus takes into account the ground reality and refuses to extend helping hand to purchasers of property in respect of which litigation is pending. If unfair, inequitable or undeserved protection is afforded to a transferee pendente lit. A decree-holder will never be able to realise the fruits of his decree, the judgment-debtor of his transferee will transfer the property and the new transferee will offer resistance or cause obstructio. To avoid such a situation, the Rule has been enacted.

Para 26. For invoking Rule 102, it is enough for the decree-holder to show that the person resisting the possession or offering obstruction is claiming his title to the property after the institution of the suit in which decree was passed and sought to be executed against the judgment-debtor. If the said condition is fulfilled, the case falls within the mischief of Rule 102 and such applicant cannot place reliance either on Rule 98 or Rule 100 of Order 21.

Para 29. The High Court, rightly held that the appellant could not to be said to be "stranger" to the suit inasmuch as she was claiming right, title and interest through Defendants 4 and 5 against whom the suit was pending. She must, therefore, be presumed to be aware of the litigation which was before a competent court in the form of Title Suit No. 140 of 1999 instituted by the present respondent against the predecessor of the appellant.

☞ Rule 102 declares that if the resistance is caused or obstruction is offered by a transferee pendente lite of the judgment debtor, he cannot seek benefit or Rule 98 or 100 of order XXI.

Thank You.
